August 2015

IJRSS Volume 5, Issue 3 ISSN: 2249-2496

रेत से उगता संगीत

डा0 आन्शवना सक्सेना
एसो. प्रो. संगीत विभाग
आगरा कॉलेज, आगरा।

भारत विविध संस्कृतियों और संगीत की विविध धाराओं वाला देश है। यहाँ संगीत के शास्त्र पक्ष की दो धाराऐं प्रचलित है। उत्तर भारत में ''भारतखण्डे'' जी द्वारा प्रचलित शैली और दक्षिण भारत में ''पलुस्कर'' जी द्वारा स्थापित शैली परन्तु जहाँ तक लोक संगीत की बात उठती है तो क्षेत्रीय आधार पर लोक संगीत बटा हुआ है। परन्तु संगीत किसी भाषा में या बंधन में बंधा हुआ नही होता है वो तो प्रकृत्ति पदत्त सरल एवं सहज अभिव्यक्ति का साधन है क्षेत्रीय भाषा, रहन–सहन और संस्कृति पर निर्भर लोक संगीत, मानव के हृदय से प्रस्कुटित होता है और पुष्प की सुगन्ध की भांति चारों दिशाओं में निर्बाध रूप से फैल जाता है।

भारत के अनेको राज्य में कई प्रकार की भाषा बोलने वाले लोग रहते है और उनकी परम्पराओं से जुड़े लोकगीत, न सिर्फ अपने देश में, बल्कि सम्पूर्ण विश्व में अपना विशिष्ट स्थान बनाए हुए है जैसे हरियाणा के हरियाणवी गीत, पंजाब का गिद्दा, इसी प्रकार से राजस्थान के लोकगीत राजस्थान के लोक जीवन के सार तत्वों के ग्रहण कर उसके धरातल पर पल्लवित एवं पुष्पित होता है राजस्थान का संगीत वहाँ की निजी चेतना और संस्कृति से अनुप्राणित रहता है। राजस्थान के लोक संगीत में अनेको प्रकार की गीत शैलियाँ जन्मी और प्रचार में आई इन्ही शैलियो मे सबसे अधिक प्रचलित शैली है ''वाणी'' इस शैली का विकास वहाँ के सन्तो ने किया। आज भी अनेको गायक चौतारे पर वाणी गायन करते हैं। चौतारे के वीज, तंदुरा अथवा निशान भी कहा जाता है। तंदुरा शब्द तंडू का अपभ्रंश है। लोग तो ये भी मानते है कि ''तानपूरा'' इसी ''तंदुरा'' का परिष्कृत रूप है यद्यपि दोनो ही बजाने की तरीका और तार मिलाने के तरीके में भिन्न है। तदूरा चार या पांच तार का होता है और इसे आद्यात करके एक लय में बजाया जाता है और चौतारे को बजाते समय ताल के खण्डो को स्पष्ट रूप से दिखाया जाता है इसके साथ ही साथ चौतारे को बजाते समय मंजीरा भी बजाया जाता है। चौतारा विशेषतः कामड़ लोगो के प्रयोग था वाद्य है साथ ही चौतारा के साथ संतो की रचनाओं के गायन ने निर्गुण और सगुण ब्रहा की उपासना–वाली धारा का सम्बन्ध लोक

साहित्य से भी बनाया हुआ है अनेक लोक कथाऐं जैसे जेसल–तोरल, रूप देवी रावलमाला रामदेव की कथा आदि आज भी गाई जाती है और कुछ संत लोक गायक जो प्रसिद्ध भी हुए भक्त, कर्मा जाटनी, पीपाजी, उगमसिंह भाटी, कर्मा जाटनी, आदि। मंजीरे के माध्यम से लय था उदभुत चमत्कार दिखाने वाली तरह वाली आज भी राजस्थान की जान है। तंदूरे का सबसे ज्यादा प्रयोग भाभी, ढेढ माली, कुम्हार, खाती आदि जातियों में भजन–कीर्तन और लोक कथाओं के गायन के साथ आज भी होता है। अनेक अप्रचलित रागो की झलक आप वाणी–गीतो में देख सकते है। वाणी गायन राजस्थान की सांगीतिक उपासना का प्रतीक है। संगीत में षडज–पंचम भाव सर्वप्रमुख है और इसकी भाव को साथ लेकर चलने वाला वाघ है **''एकतारा''** इसमें कभी–2 दो तार भी लगे होते है जो षडज और पंचम में मिलते है। तंदूरे की भांति दिखने वाला में वाच्य प्रायः भक्ति गीतो में संतो द्वारा छेड़ा जाता है एक तार पर षडज को बजाकर या दो तार पर षड़ज–पंचम दोनो को छेड़ कर संत गायक भक्ति भाव से ओत

प्रोत रचनाओं का गायन करते आज भी राजस्थान में मिल जाऐगें। ये गायक कभी–2 अपनी रचनाओं मे राजस्थान की विशाल और भव्य संस्कृति को भी अपने गीतो में पिरोते है।

आज के युग में ''हारमोनियम'' जैसे सरलवाद्या ने गॉव और शहर दोनो ही स्थानो पर अपनी एक विशेष जगह बना ली है फिर भी ''सारंगी'' जैसे वाघ और वादक राजस्थानी संस्कृति में अपनी एक विशिष्ट स्थान बनाए हुए हैं। चूंकि राजघरानों ने सारंगी वादको का विशेष संरक्षण और प्रक्षय दिया जिससे ये कठिन विधा आज भी जीवित और लोकप्रिय है। क्योंकि राजस्थान के लोक गीतो में ही नही अपितु हर प्रकार के लोक गीतो के साथ सारंगी की संगति गायकी में चार चाँद लगा देती है। प. रामनारामण, रज्जब अली, और अल्लादिया खाँ जैसे सारंगी वादको ने अपना एक विशिष्ट स्थान देश विदेश में स्थापित किया।

सारंगी तत वाघ में सर्वश्रेष्ठ रा तारो वाला गज से बजाया जाने वाला वाघ है गज पर बैरोजा लगाया जाता है जिससे गज पर लगे बाल तारों का स्पश पाकर नाद उत्पन्न करते हैं। जैसलमेर व बाड़मेर के लगा जाति के कलाकार सपाट ताने, स्वरो की क्लिष्ट हृदय स्पर्शी मुरकियों, खटके आदि से इसका सफल प्रदर्शन करते है। **''कमाइचा''** भी सारंगी जैसा ही परन्तु इससे भिन्न अलग 27 तारो वाला परन्तु गोल तबली वाला–वाघ है सारंगी की लम्बी तबली की अपेक्षाकृत कमाइचा की गोल तबली से स्वरो में गूंज और भारीपन दोनो ही आ जाता है। कमाइचा मराठी सारंगी जैसा दृष्टिगोचर होता है अनेक नाथपंथी साधु कमाइचा पर भरतहरी और गौपीचंद कथा का गान करते हैं और आज भी यह वाक्य अधिकांशतः नाथ सम्प्रदाय के कलाकारो द्वारा ही प्रचलित है।

''रावणहत्या'' राजस्थान का सर्वाधिक प्रसिद्व वाद्य है पढ़ेह गायन, राजस्थान का ही प्रसिद्व ढोला मरवण स्वतंत्रता संग्राम के वीर सेनानी डूंगसिंह की शौर्य गाथाऐ इत्यादि रावहत्था वाद्य के साथ गाई जाती है। पौराणिक साहित्य और हिन्दु मान्यतओं के अनुसार 3000 वर्ष पूर्ण लंका के राजा रावण द्वारा इसके आविष्कार की कथा आज भी चलन में है यह प्राचीनतम वाघ अत्यंत मधुर सवरलहरियाँ बिखेरता है। इसकी बनावट अत्यंत सरल है बड़े नारियल पर बॉस लगाकर उसे चमडे से मढ़ना, कसे हुए चमड़े पर सुपारी की लकड़ी की घोड़ी बैठाकर बांस में नौ छेद करके, नौ तार लगाए जाते है। घोड़े के बालो से इसका गज बना होता है जो थोड़ा ढीला होता है। रावण हत्थे का पटवा तार घोड़े के बालो का बना होता है और इन बालो वाले तार पर जब गज चलता है तो रगड़ से मधुर स्वरों की उत्पत्ति होती है नायक जाति के भोपे, बावरी और भील इसके गज में घुधरू लगाकर लोक कथाओ का गान करते हुए यत्रतत्र आज भी मिल जाऐगे।

''जंतर'' भी एक प्राचीन लोकवाद्य है। मेवाड़ बदनौर, नेगड़िया, सवाई भोज आदि क्षेत्र विशेष के लोग इस वाघ का प्रयोग बगड़वतों की कथा कहने में करते है। यह बीणा के प्रारम्भिक रूप की तरह प्रतीत होता है। इसकी डांड बॉस की होती है जिस पर पशु विशेष की खाल से बने 22 पर्दे मोम से चिपकाये जाते हैं। परदों पर पॉच या छः तार लगे होते है। जंतर को गले में पहनकर खडे होकर दोनो हाथ पूरी लम्बाई में फैलाकर बजाया जाता है। देवनारायण के भजन और गीत मे भी यह मधुर वाद्य आज भी गूजर भोपो द्वारा बजाया जाता है पर अब यह कहीं–कहीं ही देखने को मिलता है।

पुंगी भी राजस्थान का एक प्राचीन और प्रचलित लोक वाद्य है साथ ही पुंगी वादन ऐतिहासिक परम्पराओ से कही गहराई से जुड़ा हुए ऐसा वादन है जिसे बजाने के लिए बहुत ताकत और सांस पर नियन्त्रण की आवश्यकता पड़ती है। प्रायः राजस्थान के आदीवासी बीहड़ और जंगली इलाके से रहने वाले सपेरे जिनको जोगी या नाथी भी कहा जाता है इसे बजाने में प्रवीण होते हैं राजस्थान में

थोड़ी–2 दूरी पर ही बोली परिवर्तित हो जाती है तो बोली विशेष में ही इसमें लोक गीतो के साथ **''खंजरी''** के साथ इसका वादन होता है। यद्यपि यह मूलतः सांप पकड़ने वाले कालबेलिए भी होते हैं।

राजस्थान मे घूमर, मांड, मूमल, कुरंजा आदि प्रसिद्व गायन शैलियो के अतिरिक्त **''लूर''** भी एक विशेष गायन –शैली है जिसमे देवी की भक्ति और प्रशंसा के बारे में गायन करते हुए प्रायः स्त्रियॉ नृत्य भी करती है इस ''लूर'' गायन शैली में **''नड़''** नामक वाद्य का प्रयोग होता है। पैरो में और कमर में बड़े घुंघर बांधकर भैरों जी के भूपे भी स्वरलहरियों पर मस्ती से गाते, नाचते है। नड़ का स्वरूप एक मशक की तरह होता है और इसे मुख पर टेढ़ा रख कर बजाया जाता है। यह वाद्य भी अब बहुत कम प्रचलन मे रहा गया है।

रंगरिए, जोगी, सींगी वाले उदासी मत के ग्रहस्थी वाले साधु, परिवार प्रायः **''सीगी'' ''अपंग'' ''चंग'', ''चिमटा'' एवं '' ढोलक'', '' सांझ'' , '' मंजीरे''** इत्यादि वाद्य बजाकर प्रायः राजस्थान के दरगाह के आसपास लगने वाले मेलो या पुष्कर के आसपास लगने वाले मेलो मे लोक गायन करते हुए मिल जाते है। ये लोग मीठे स्वर में अधिकांशतः समूह में गाते–बजाते हैं। **''ढोलक''** और **''चंग''** का प्रयोग अधिक होता है। सांसी और कंजर जाति की स्त्रियाँ ढोलक बजाकर और पुरूष ढोल और थाली बजाकर गाने में प्रवीण होते हैं। कुछ जातियॉ '' **अलगोजा''** बजाने में भी प्रवीण है ऐसा प्रतीत होता है कि राजस्थान के लोंगो को लोक कलाऐं विरासत में मिल हुई हैं।

''ढोल'' एक ऐसा वाद्य है जो सम्मवतः बहुत से प्रदेशों की लोक कलाओ और लोक गीतो का अभिनन अंग है। राजस्थान में ढोल बजाने वाले '' ढोली'' कहलाते है। ये अनेक मांगलिक उत्सवों पर बजाए जाते है '' ढोली'' लोगो के अतिरिक्त अन्य जाति के लोग भी ढोल वादन करते हैं। राजस्थान का गेर नृत्य या तो चंग के साथ या ढोल के साथ ही होता है **भाहनाई, नक्कारा, मृदंग** भी खूब प्रचलन में है।

जिस प्रकार से परम्परागत गायन शैलियाँ विकसित हुई उसी प्रकार से उन गायन शैलियो के साथ–2 अनेको वाद्यों का जन्म हुआ, उनका विकास हुआ लगभग सभी प्राचीन वाद्यो को आज भी अपनी परम्परागत धरोहर मानकर संजोते हुए लोग आपको मिल जाऐगे पर जिस प्रकार से पश्चिमी वाद्यो के प्रति युवाओं का झुकाव बढ़ा है ऐसे में प्राचीन गायन शैलियों और वाद्यों के रूप में हमारी परम्पराओं और धरोहर का सम्भाल पाना एक बड़ी चुनौती बन गई है। इसके लिए आवश्यकता इस बात की है कि जिस प्रकार स्कूली शिक्षा में उच्च स्तर तक संगीत के शास्त्र का शिक्षण और समाज में संगीत उत्सवो का प्रचार प्रसार हुआ है। उसी प्रकार लोक गीत और लोक वाद्यो को भी शिक्षण–प्रशिक्षण और प्रचार प्रसार में स्थान मिलना चाहिएए तभी हमारी इस गौरवशाली, अमूल्य धरोहर को आने वाली पीढ़ियो के लिए सुंरक्षित रख पाऐगें और इसके लिए महती आवश्यकता इस बात की है कि समाज के सभी विद्वान और गुणीजन सम्वेत स्वर में इन लोक परम्पराओं को सम्मान देने , आर्थिक स्वाबलेबता,देने और राज्य सरकारें का ध्यान इस ओर आकृष्ट करने का प्रयत्न करें ताकि जिन लोगों ने शताब्दियो से अनेक प्रकार के कष्ट सहकर इस लोक निधि को आज तक सुरक्षित रखा है हम भी उसे नष्ट होने से बचाकर अपने कर्तव्यों का भली भांति पालन कर सके और आपने देश का गौरब सम्पूर्ण विश्व में बढ़ा सकें।

संन्दर्भ सूचीः–

1. डा. श्याम परमार– भारतीय लोक साहित्य पृष्ठ –16
2. डा. कुंदन लाल उप्रेती– लोक साहित्य के प्रतिमान पृष्ठ – 12, 15
3. राजस्थानी लोकगीत– चन्द्रकान्ता व्यास पृष्ठ– 15, 20
4. राजस्थान के लोकगीत – मंजु तैवर – पृष्ठ –25,35,65
5. 'लोक जीवन की राजस्थानी कहानियॉ – धर्मराज पवार–
6. राजस्थानी लोक संगीतिक यात्रा– डा. अंशुवार्मा – पृष्ठ– 50
7. लोक काव्य के क्षितिज– डा0 हरिसिंह पाल
8. दयालबाग डीम्ड विश्वविद्यालए से रिटायर्ड डा. ईश्वरसिंह खिच्ची से वार्ता के आधार पर
9. आकाशवाणी के लोक कलाकारों से वार्ता के आधार पर